वैश्विक परिदृश्य में ओशो का दर्शन एवं शिक्षा—एक समीक्षात्मक अध्ययन

आई.आई.एम.टी.विश्वविद्यालय,मेरठ

की

पी—एच.डी. (शिक्षा शास्त्र)

उपाधि हेतु रूपरेखा

शोध निर्देशिका

डॉ.सुधा शर्मा

सहायक प्राध्यापिका

शोधकर्त्री

नम्रता मिश्रा

—: शोध केन्द्र :—

शिक्षाविभाग

आई.आई.एम.टी. विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

सत्र—2021—2022

वैश्विक परिदृश्य में ओशो का दर्शन एवं शिक्षा – एक समीक्षात्मक अध्ययन

प्रस्तावना

''प्रत्येक व्यक्ति अनूठी कृति है परमात्मा की, और उसकी हमें स्वीकृति होनी चाहिए और यह ध्यान होना चाहिए कि हमारी पूरी शिक्षा हमारी पूरी संस्कृति और सभ्यता उसके भीतर जो भी छिपा है, उसे निकाल–कर बाहर ले आये, उसके भीतर कुछ छिपा न रह जाये।'' वस्तुतः शिक्षा की इसी भूमिका का पोषक थे ओशो।

ओशो का शिक्षा विषयक चिन्तन कालजयी चितक के विचारवान रचना संसार का आईना है। जो व्यक्ति की दृष्टि नहीं दृष्टिकोण ही बदल देता है। इसी विचार का परिणाम है कि वे मानते हें कि शिक्षा सिर्फ अतीत का स्मृति सागर नहीं है जहाँ हम सिर्फ हो चुके होते हैं– सिर्फ हैव वीन। शिक्षा होंगे की संभावना भी है– वुड वी होने की आश्वस्ति भी है। हमें मन के बहुत गहरे ये कचोट लगने लगती है कि शिक्षा रूढ़ियों के कब्रिस्तान में शब्दों की उछलकूद का ही नाम नहीं है बल्कि शिक्षा उस जीवंत सतत् गतिशील अंकुर के अस्तित्व को पहचानने का उपक्रम है जिसमें वृक्ष होने की संभावना एवं सामर्थ्य है।

आज शिक्षा के नाम पर आदमी को जो बौना बनाया जा रहा है इस कदहीन शताब्दी का दर्द उस अनुत्पादक शिक्षा की समग्र विफलता का बिलखता हुआ दस्तावेज है। आज की शिक्षा पद्धति आदमी को रट्टू तोता बनाने की घिनौनी साजिश है। उसके भीतर जो संभावनाओं का गीत पल

रहा होता है, उस गीत के मुलायम पंखों पर बेरोजगारी पैदा करने वाली डिग्रियों के पत्थर बाँधकर उसे पंखहीन करने का लुभावना षड्यंत्र है– आज की शिक्षा पद्धति। शिक्षा पीढ़ियों और मुल्कों के कतार बद्ध होकर मरते रहने का फरमान नहीं होती बल्कि शिक्षा एक खबरदार आदमी का वह अघोषित बयान होती है जो हमें सिखाती है कि बेअसर मुर्दा, शब्दों से बेहतर होता है– अनबोला एक असरदार शब्द। विद्रोही और पूर्ण परिवर्तन के आकांक्षी स्वभाव से भरे रजनीश का प्रत्येक शब्द पुरातन का विरोधी और नवीनता के सृजन का पोषक रहा है। इसलिए वे कहते हैं कि यह सारी शिक्षा जला देने योग्य है। सारी शिक्षा का सरअंजाम गलत है। तो फिर से पूरे के पूरे नये आधार रखने की जरूरत है और वे आधार होगें कि हमें प्रेम सिखाया जाये प्रतियोगिता नहीं। मनुष्य को मनुष्य के प्रति सम्मान सिखाया जाये, पदों ओहदों के प्रति आदर नहीं। जरूरी है कि कामों के साथ प्रतिष्ठा न जोड़ी जायें। समग्र जीवन में सभी लोगों का सामूहिक योगदान है, यह भाव पैदा किया जाये।''

वे मानते हैं कि आज शिक्षा अपने लक्ष्य से अपने अर्थ से भटकी हुई है। वह केवल इनफार्मेशन फीडिंग का काम कर रही है। वह अपने अर्थ टू ड्रॉ आउट से स्थान पर टु पुश इन की भूमिका निभा रही है। इस दृष्टि से शिक्षा केवल सूचनायें देने का कार्य कर रही है। वे मानते हैं कि सूचना और ज्ञान में अन्तर है। सूचना वह है जो बाहर से मिलती है जबकि ज्ञान वह है जो हमारे भीतर से आता है। इसीलिए उनकी दृष्टि में आज की शिक्षा व्यवस्था से निकले व्यक्तियों को इस शिक्षा का जीवन में कोई लाभ नहीं मिलता। जीवन की जटिलताएं कुछ और होती हैं और हमारे समाधान कुछ और। वे कहते हैं कि अगर पच्चीस साल के व्यक्ति को जो यूनिवर्सिटी से निकलता है, उसकी हम खोपड़ी की जाँच पड़ताल करें तो

वह कोई बुद्धिमत्ता लेकर नहीं आता, वह सिर्फ स्मृति का संग्रह लेकर बाहर आता है और इसीलिए अक्सर ऐसा होता है कि विश्वविद्यालय जिन्हें गोल्ड मैडल देता है, जिन्दगी उन्हें मिट्टी का मैडल भी नहीं देती।

ओशो बीसवीं शताब्दी की महान विभूति थे। उन्होंने समसामयिक समस्याओं के प्रति एक अलग नजरिया रखते हुए प्रत्येक समाज के आमूल समाधान का एक व्यवहारिक किन्तु तीखा समाधान, बिल्कुल एक सर्जन की तरह प्रस्तुत किया। यद्यपि ओशो की आलोचना बहुत हुई परन्तु उनका सम्यक् मूल्यांकन नहीं किया गया। मध्य प्रदेश के कुचवाड़ा गाँव में 11 दिसम्बर 1931 में जन्में रजनीश चन्द्रमोहन ने मूढ़ताओं और पाखंडों का पर्दाफाश किया। ओशो ने अपने दर्शन में अतिशय वादिता के स्थान पर मध्यम मार्ग को अपनाया। वे अपने दर्शन से मनुष्य को उस दिशा में ले जाने को सतत् प्रयत्नशील रहे जहाँ वह भौतिक और आध्यात्मिक दोनों तरह से समृद्ध हो।

अपने विद्यार्थी जीवन में एक मेधावी छात्र ओशो जबलपुर विश्वविद्यालय में दशर्नशास्त्र के प्राध्यापक भी रहे। शिक्षा क्षेत्र से जुड़े होने के कारण अपने लेखन, प्रवचन और चर्चाओं में उन्होंने शिक्षा के एक सर्वथा नवीन ढाँचे की परिकल्पना की जो प्रेम, समत्व, आत्मीयता और व्यक्तित्व के पूर्ण विकास को अपना लक्ष्य मानती है। एक सहज साधक और विचारक की भाँति उन्होंने भी विसंगतियों को मिटाने और समरसता द्वारा बंधुत्व के भाव की स्थापना के लिए एक नवीन दृष्टि और सोच दी है। परन्तु वे इस सब लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक शैक्षिक क्रान्ति की आवश्यकता अनुभव करते थे– दुनियाँ ने इधर पाँच हजार वर्षों में बहुत सी क्रान्तियाँ करके देख लीं। उसने आर्थिक क्रान्तियाँ की हैं और राजनीतिक क्रान्तियाँ की हैं लेकिन अब तक शिक्षा में कोई बुनियादी क्रान्ति नहीं हुई

और यह विचारणीय हो गया है कि क्या शिक्षा में कोई बुनियादी क्रान्ति हुए बिना मनुष्य की संस्कृति में कोई क्रान्ति हो सकती है। जिस दिन भी शिक्षा व्यक्ति की अद्वितीय और बेजोड़ निजता के सत्य को स्वीकार करेगी उस दिन ही एक बड़ी क्रान्ति का सूत्रपात हो जायेगा। फिर हम किसी के ऊपर किसी और के ढाँचे को नहीं थोपेंगे। वरन उस व्यक्ति की बीज में ही जो प्रसुप्त है उसके जागरण के लिए चेष्ठारत रहेंगे। उनकी दृष्टि में अर्थपूर्ण बात केवल इतनी है कि गुलाब पूरा विकसित हो उसकी पंखुड़ियाँ अविकसित न हों, इसके अतिरिक्त जीवन को कोई आनन्द नहीं और शिक्षा के कार्य की सम्यक् दिशा यही है। ओशो मानते हैं कि शिक्षा का कार्य उत्तर देना नहीं है बल्कि प्रश्न खड़े करना है और व्यक्ति को इस योग्य बनाना है कि वह स्वयं उनका समाधान खोज सके। वे कहते हैं किसी एक प्रश्न का उत्तर पा लेना महत्वपूर्ण नहीं है वरन स्वयं के भीतर विचार की शक्ति का जग जाना महत्वपूर्ण है। तब फिर किन्हीं भी जीवन की समस्याओं के उत्तर व्यक्ति खुद ही पाने में समर्थ हो जाता है। यदि शिक्षा उन्हें जीवन सत्य के अनुसंधान की महत् यात्रा पर
भेज सके तो उसका कार्य पूरा हो जाता है।

धार्मिक शिक्षा के विषय में ओशो ने बहुत ही तीखे विचार हैं— ''समस्त धर्मों ने शब्दों के साथ खिलवाड़ किया है ओर व्यक्ति को इतना समझदार नहीं होने दिया है कि वह शब्दों के अर्थ को अपने विवेक से समझ सके। उसे चारों तरफ विभिन्न मतों, पंथों, धारणाओं और सम्प्रदायाओं का एक जंगल खड़ा कर दिया है। आदमी इसी जंगल में उलझ गया है वह वह नैतिकता के नाम पर सड़े लिजलिजाते विचारों को ढो रहा है।'' वे कहते हैं कि ''धर्म शिक्षा की आड़ में पुरानी पीढ़ी अपने अज्ञान अपने अंधविश्वास अपने रोग और शत्रुतायें सभी नई पीढ़ी को दे

जाना चाहती है। ऐसे उसके अहंकार की तृप्ति होती है। यही अहंकार रुग्ण घेरों से मनुष्य को मुक्त नहीं होने देता। विकास के मार्ग में इससे बड़ी और बाधा नहीं है। ऐसी किसी भी धार्मिक शिक्षा को वे नकारते हैं और कहते हैं कि ''धर्म की शिक्षा अबुद्धि और अंधेपन की शिक्षा नहीं हो सकती। वह तो गहरी विचारणा की शिक्षा है। इसलिए सम्यक् शिक्षा धर्म विहीन नहीं हो सकती क्योंकि जीवन का आधार जो चेतना है, जो आत्मा है, उससे परिचित होना जीवन को उसकी पूर्णता तक ले जाने के लिए अपरिहार्य है। अतः वे धार्मिक शिक्षा के एक सर्वथा नवीन स्वरूप की बात करते हैं– ''धर्म की शिक्षा साहस, विवेक और शान्ति की शिक्षा है। धर्म की शिक्षा–अभय, जागरुकता और निर्विचार मौन की शिक्षा है। ऐसी शिक्षा निश्चित रूप से उस स्थिति को जन्म देगी जहाँ धर्म 'मेरा या तेरा' नहीं रहेगा वहाँ धर्म तो बचेगा लेकिन धर्मों का अस्तित्व संकट में पड़ जायेगा।

मूल्य शिक्षा के विषय में भी उनका दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न है, वह ऐसी नैतिकता के विरोधी हैं जो बाहर से थोपी जाये। वे मानते हैं कि यदि व्यक्ति कुछ अनैतिक करे, तो उसकी संवेदनशीलता इतनी हो कि उसे अहसास हो जाय कि जो उसने किया है, वह ठीक नहीं है। वे नैतिकता विकसित करने के वर्तमान शैक्षिक परिवेश की आलोचना करते हैं। एक उदाहरण देते हुए वे कहते हैं, ''शिक्षक डंडा लिये खड़ा है और लड़के से कह रहा है, झूठ मत बोलना, झूठ बोला तो सिर फोड़ दूँगा। इसका डंडा तो झूठ बोलने को मजबूर कर देगा। वह कहने वाला था कि गुल्ली–डंडा खेल रहा था, परन्तु कहता है मैं पिता की दवाई लेने गया था अस्पताल में, इसीलिये स्कूल आने में देर हो गई।

इसीलिए वह शिक्षा में अनुशासन की भूमिका को नकार देते हैं वे कहते हैं ''काश अनुशासन की जगह विवेक सिखाया गया होता,

आज्ञाकारिता की जगह विचार सिखाया गया होता, तो निश्चय ही दुनिया बिल्कुल दूसरी ही हो सकती थी। शिक्षा अनुशासन देने को नहीं आत्मविवेक देने को है। उससे ही जो अनुशासन फलित होगा, वही शुभ और मंगलदायी हो सकता है।

ओशो ने प्राथमिक शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण माना है क्योंकि बुनियाद को श्रेष्ठतम होना चाहिए। वे मानते हैं कि आज की शैक्षिक व्यवस्था उल्टा पिरामिड बना रही है। वे उस शिक्षण की कल्पना करते हैं जो एक मार्गीय यातायात की तरह एक तरफा न हो वे इस भ्रम को तिलांजलि देना चाहते हैं कि अमुक सीखने वाला है और अमुक सिखाने वाला। ओशो मानते हैं कि हमारी परीक्षा प्रणाली केवल स्मृति की ही परीक्षा ले पाती है, वह बुद्धि का परीक्षण नहीं करती इसलिये वह परिवर्तन योग्य है।

स्त्री शिक्षा के संदर्भ में ओशो का मानना है कि जो शिक्षा पुरुषों को दी जाती है, उसे स्त्रियों को देना खतरनाक है उनके विचार में ''गणित सीख लेने से दुकानें चल सकती होंगी, बच्चे नहीं बड़े किये जा सकते हैं। साइंस से फैक्टरी चलती होगी लेकिन परिवार नहीं चल सकते और परिणाम यह हुआ कि स्त्री को पुरुष जैसी दीक्षा और शिक्षा समानता के भाव ने स्त्रियों से जो भी उनका महत्वपूर्ण मातृत्व था, वह सब छीन लिया है। उनके जीवन में जो भी गौरवपूर्ण पत्नीत्व था, वह सब छीन लिया है। उनके भीतर जो भी स्त्रैण था, वह नष्ट कर दिया है। वे करीब–करीब पुरुष की नकल से निर्मित की जा रही हैं और वे बहुत प्रसन्न मालूम होती हैं। इस प्रसन्नता के लिये हजार–हजार आँसू आज नहीं तो कल स्त्रियों को रोने ही पड़ेंगे।

ओशो शिक्षा के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शिक्षक को सबसे महत्वपूर्ण मानते है। और कहते हैं कि मेरी दृष्टि में शिक्षक ही है, जो प्रसुप्त समस्याओं को जगा देता है और जिज्ञासा को जाग्रत कर देता है। बच्चों को उनके स्वयं के अनुसंधान के लिए साहस और अभय से भर देता है। ऐसा वह तभी कर सकता है जब वह स्वयं आग्रहों और पक्षपातों से मुक्त हो। इस प्रकार ओशो ने शिक्षा के लिए नये ढाँचे की कल्पना की है।

इस दृष्टि से ओशो एक कोरे दार्शनिक नहीं है जो जीव और जड़ के प्रपंच में पड़ा रहा हो। उनकी दृष्टि आधुनिक मनुष्य की हर समस्या तक गयी है और उन्होंने उसके समाधान सुझाये हैं। परन्तु निश्चित रूप से वे मानते हैं कि नये समाज की पुनर्स्थापना में शिक्षा में शिक्षा अनिवार्य और महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। ओशो की शैक्षिक विचारधारा आदर्शवाद और प्रकृतिवाद के बीच से बहती हुई व्यवहारवाद को स्पर्श करती है, ऐसा मेरा विचार है। इसलिए ओशो को शिक्षाशास्त्री भी माना जा सकता है। शिक्षा के प्रति उनके विचार क्रमबद्ध, स्पष्ट और व्यवहारिक हैं। उनका

शैक्षिक दर्शन शिक्षा को एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण से देखता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :—

हमारे देश पर अनेक आक्रमणकारियों ने राज्य करने के दौरान अपनी संस्कृति थोपने का प्रयास किया, किन्तु देश के मनीषियों, आचार्यों, विद्वानों, दार्शनिकों एवं शिक्षा शास्त्रियों ने अपनी गौरवमयी संस्कृति एवं परम्पराओं को न केवल अक्षुण्य बनाया वरन् उसे सतत् गतिशील भी बनाए रखा।

वर्तमान में देश ऐसे संक्रमण काल से गुजर रहा है, जिसमें भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों का ह्रास तीव्रता से हो रहा है। नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों के अतिरिक्त भौतिकवादी मूल्य दृष्टिगत हो रहे हैं लेकिन समाज केवल भौतिक मूल्यों से ही नहीं चल सकता, इसलिए आज ऐसे मूल्यों को खोजने की आवश्यकता है, जिन को धारण कर मनुष्य वास्तविक सुख और शान्ति प्राप्त कर सके। ओशो का शिक्षा–दर्शन भारती संस्कृति पर आधारित मान्यताओं के परिशोधन एवं शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने में सहायक है।

वर्तमान की मूल्य विहीन शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने हेतु शोधकर्त्री ने वैश्विक परिदृश्य में ओशो का दर्शन एवं शिक्षा – एक समीक्षात्मक अध्ययन को अपने
शोध का विषय चुना है।

समस्या कथन :–

बचपन से ही अनुसधांनकर्त्री को महान दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों और धर्म प्रवर्तकों के जीवन की घटनाओं, क्रिया–कलापों में रुचि रही है। शोधकर्त्री ओशो की विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित हुई है और पिछले वर्षों से ओशो पर कोई कार्य भी नहीं हुआ है। अतः शोधकर्त्री नेअपने शोध कार्य के लिए इसी महत्वपूर्ण विषय का चयन किया है। शोधकर्त्री ने अपने अध्ययन के लिए समस्या का चुनाव इस प्रकार किया है–

''वैश्विक परिदृश्य में ओशो का दर्शन एवं शिक्षा– एक समीक्षात्मक अध्ययन''

समस्या का परिभाषीकरण :–

समस्या के परिभाषीकरण के सम्बन्ध में आर.एल. विल्हरे का कथन महत्वपूर्ण है– ''परिभाषीकरण से तात्पर्य अध्ययन की समस्या को चिंतन द्वारा सम्पूर्ण समस्या क्षेत्र से बाहर निकालकर स्पष्ट करना है।''

शोधकर्त्री द्वारा चुनी गई समस्यायें इस प्रकार हैं–

- ओशो का जीवन परिचय
- ओशो की दार्शनिक विचारधारा
- ओशो की शैक्षिक विचारधारा

समस्या की परिसीमाएं–

1- ओशो का जीवन परिचय

2- शिक्षा का प्रत्यय

3- शिक्षा का उद्देश्य

4- शिक्षा का पाठ्यक्रम

5- शिक्षण विधियाँ

6- शिक्षक

7- शिक्षार्थी

8- विद्यालय

9- ओशो की दृष्टि में शिक्षा के विभन्न आयाम

10-प्रेम केन्द्रित शिक्षा

11-स्त्री शिक्षा

12-मूल्य शिक्षा

13-शिक्षा और धर्म

14- वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में ओशो के शैक्षिक विचारों का औचित्य एवं ओशो के शैक्षिक विचारों का मूल्यांन – औद्योगीकरण एवं उद्योग शिक्षा, तकनीक और तकनीकी शिक्षा, वैश्विक सांस्कृतिक परिवेश एवं शिक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय जीवन पद्धति एवं शिक्षा, मुक्त व्यापार एवं शिक्षा, वैश्विक राजनीतिक एवं शिक्षा।

15. निष्कर्ष

प्रस्तावित अध्ययन के उद्देश्य :–

भारतीय संस्कृति, धर्म व दर्शन अत्यन्त प्राचीन, विशद और विस्तृत विषय है। आज के परिवर्तनशील सामाजिक एवं भौतिक परिवेश में भारतीय संस्कृति, धर्म सम्बन्धी तत्व मीमासांयें आदि हम भारतीयों के लिए लगभग अपरिचित होती जा रही हैं, जबकि मानव कल्याण का आधार स्तम्भ, भारतीय आध्यात्मिक एवं दर्शन, भौतिकता के चरमोत्कर्षप जीवनयापन कर रहे विदेशियों को आकर्षित कर रहे हैं। विश्व के लोग शान्ति और आनन्द पाने हेतु इस देश की संस्कृति व दर्शन को आत्मसात् कर रहे हैं–

प्रस्तावित अध्ययन ऐसा ही उद्देश्य लेकर किया गया है, उद्देश्य का प्रस्तुतीकरण निम्न है–

1- ओशो जैसे महान दार्शनिक, ध्यान एवं प्रेम के संयोजक के जीवन परिचय को जानना।

2- प्रायः व्यावहारिक जीवन में आम मनुष्यों से अपरिचित दर्शन विषय को समझाने का प्रयास करना।

3- वर्तमान भारतीय परिप्रेक्ष्य में ओशो के शैक्षिक विचारों का औचित्य एवं मूल्यांकन।

4- शिक्षा के विभिन्न आयामों स्त्री शिक्षा, मूल्य शिक्षा, प्रेम केन्द्रित शिक्षा और

धार्मिक शिक्षा के संदर्भ में ओशो के विचारों का अध्ययन करना।

5- आधुनिक शैक्षिक समस्याओं का हल ओशो के शिक्षा–दर्शन द्वारा खोजना इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है।

6- वैश्विक परिदृश्य में औद्योगीकरण, जीवन पद्धति संस्कृति, व्यापार, राजनीति, तकनीक आदि की शिक्षा के सन्दर्भ में ओशो के विचारों की समीक्षा।

अध्ययन विधि :–

प्रस्तावित अध्ययन में ऐतिहासिक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया जाएगा। क्योंकि इतिहास ही किसी क्षेत्र में अतीत की घटनाओं का एकीकृत वर्णन है। वर्तमान की समस्याओं को हल करने के लिए अतीत के अनुभवों से लाभ उठाना ऐतिहासिक अनुसंधान की उपयोगिता को तर्क–संगतता प्रदान करता है। अतीत केवल अतीत ही नहीं वरन् वर्तमान को भी समझने की कुंजी है।

शोधकर्त्री द्वारा प्राथमिक साधनों में जीवन वृतान्त, कहानियाँ, भाषण, उपाख्यान और प्रवचन आदि साधनों का उपयोग किया जायेगा और गौण साधनों के अन्तर्गत पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तक तथा लघु शोध प्रबन्धों और वृहद शोध प्रबन्धों का प्रयोग किया जायेगा।

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन :–

सम्बन्धित साहित्य से तात्पर्य, अनुसंधान की समस्या से सम्बन्धित उन सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञानकोषों, पत्र–पत्रिकाओं, प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध प्रबन्धों एवं अभिलेखों आदि से है जिनके अध्ययन से अनुसंधानकर्त्री को अपनी समस्या के चयन, परिकल्पनाओं के निर्माण अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने एवं कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है।

शोधकर्त्री ने दर्शन सम्बन्धी एवं उनकी शिक्षा से सम्बन्धित विचारों से सम्बन्धित

शोधकार्य का अध्ययन करने के बाद ही इस विषय का चयन किया है।

निष्कर्ष :–

यदि हम अपनी सांस्कृतिक और दार्शनिक चिन्ताओं पर दृष्टि डालें तो ओशो का शिक्षा–दर्शन उन सभी में स्पष्ट दिखाई पड़ता है, जो मानव मात्र से प्रेम करने का संदेश देते हैं। वेद से लेकर गीता तक सभी शिक्षा–दर्शन प्रेम–केन्द्रित ज्ञान और श्रद्धा की भावना पैदा करते हैं, ठीक उसी प्रकार ओशो भी शिक्षा दर्शन में प्रेम–केन्द्रित शिक्षा की बात करते हैं।

शिक्षा में मूल्यों की स्थापना के सम्बन्ध में ओशो का मानना है कि आज जब शिक्षा–मनोविज्ञान यह स्पष्ट कर चुका है कि कोई भी दो व्यक्ति आपस में समान नहीं होते। प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्तिगत भिन्नताएं होती हैं जो उसे अन्य से अलग करती है। ऐसे में शिक्षा के मूल्य निश्चित करना

शिक्षा की आवधारणा को संकीर्ण बनाना है। इसीलिए शिक्षा के उद्देश्य भी पूर्व निर्धारित नहीं किये जा सकते हैं।

पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में भी ओशो का यही विचार है कि पाठ्यक्रम पूर्व निर्धारित नहीं होना चाहिए क्योंकि आज मानव विश्व स्तर पर ज्ञान के क्षेत्र में हो रही उन्नति से अछूता नहीं रह सकता तो फिर निश्चित पाठ्यक्रम की आवश्यकता ही कहाँ है। इनके शिक्षा–दर्शन में आधुनिक शिक्षण विधियों जैसे प्रयोगशाला विधि, भ्रमण विधि, प्रश्न एवं खोज विधि का भी उल्लेख मिलता है जो आधुनिक भारतीय परिस्थितियों में अति आवश्यक है।

ओशो गुरू और शिष्य के सम्बन्ध पर अपनी बात करते हुए प्रकृतिवादी दर्शन की तरह स्पष्ट करते हैं कि बालक खुद ही सीखता है, अध्यापक तो केवल उसका मार्गदर्शक है। अध्यापक को एक अच्छा मित्र होना चाहिए जो समयानुसार उसे सर्वोत्तम कार्यों की ओर प्रवृत्त होने में सहायक बनें। अध्यापक को खोजी प्रवृत्ति का, आशावादी, विनम्र, परोपकारी, परिश्रमी, प्रेम पूर्ण सम्बन्धों को समझने वाला और प्रयत्नशील होना चाहिए जिससे वह ठीक प्रकार से बालक का पथ प्रदर्शन कर सके।

शिक्षा कहाँ दी जाए और उसका परिवेश कैसा हो, इस संदर्भ में आशो का कहना है कि वर्तमान परिस्थितियाँ हमें यह बताती हैं कि विद्यालय का वातावरण सभी भौतिक सुविधाओं से परिपूर्ण और आकर्षक होना चाहिए। विद्यालय का वातावरण नीरस एवं बोझिल न हो, भय का वातावरण न हो अपितु स्वतंत्र विचरण की पूर्ण स्वतंत्रता हो, किसी भी प्रकार का अंकुश बालक में हीनभावना पैदा करता है। विद्यालय इतना आकर्षक एवं सुन्दर होना चाहिए कि बालक वहाँ पूरा दिन प्रेम और आनन्द से बिता सके।

स्वतंत्रता और अनुशासन के सन्दर्भ में ओशो का मानना है कि बालक में स्व–अनुशासन का विकास किया जाना चाहिए। प्रकृति ही सबसे अच्छा अनुशासन करती है और वह स्वयं ही बालकों में स्व–अनुशासन की भावना पैदा करती है।

ओशो का मानना है कि विद्यालय में एक आधुनिक उपकरणों से युक्त प्रयोगशाला, विभिन्न तरह की वस्तुओं का संग्रह, आधुनिक मनोरंजन की वस्तुएँ और बालकों के शारीरिक विकास के लिए खेल का मैदान एवं पर्याप्त खेल उपकरण होने चाहिए, साथ ही संगीत कक्ष, ध्यान कक्ष और अध्ययन–कक्ष अलग–अलग होने चाहिए, जिसमें बालक का सर्वांगीण विकास हो सके।

आधुनिक भारतीय परिस्थितियों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि आचार्य रजनीश (ओशो) का शिक्षा–दर्शन वर्तमान शैक्षिक समस्याओं का समाधान करते हुए आगामी पीढ़ी के लिए एक नई दिशा का सूत्रपात करता है।

ओशो का विचार था कि तकनीक और व्यापार वह शक्तियाँ हैं जो विश्व के सम्बन्ध और सन्तुलन तय करती है। साथ ही ओशो संक्रीर्ण राष्ट्रवाद के भी मुखर विरोधी थे। उनका मानना था कि कोई भी शिक्षा समग्र मानवता को दृष्टि में रखकर होनी चाहिए। अतः वैश्विक परिदृश्य में उनके विचार विविध नवीन वैश्विक संकल्पनाओं के लिए जाने जाने चाहिए। यही इस प्रस्तावित अध्ययन का अभीप्स है।

सन्दर्भ :–

1- ओशो (1996), शिक्षा में क्रान्ति, रेबल पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, पुणे।

2- ओशो (1997), नये भारत की खोज, डायमंड पाकेट बुक्स प्रा0लि0, नई दिल्ली।

3- ओशो (1998), भारत : एक अनूठी सम्पदा, डायमंड पाकेट बुक्स प्रा0लि0, नई दिल्ली।

4- ओशा टाइम्स, इण्टरनेशनल (मासिक पत्रिका) मार्च 1996, प्रकाशक ताओ पब्लिशिंग प्रा0लि0, पुणे, पृष्ठ 16–17

5- ओशा टाइम्स, इण्टरनेशनल (मासिक पत्रिका) अक्टूबर 1998, प्रकाशक ताओ पब्लिशिंग प्रा0लि0, पुणे, पृष्ठ 13

6- नीरव, सुरेश (1996), भूमिका, शिक्षा में क्रान्ति, रेबल पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, पुणे, पृष्ठ 5–7